महिला हिंसा और पुलिस की भूमिका
राजस्थान के सन्दर्भ में

लाड़ कुमारी जैन

आजादी के 68 वर्ष व संविधान लागू होने के लगभग 66 वर्ष बाद भी देश व प्रदेश में महिलाओं की स्थिति कोई बहुत अच्छी नहीं हैं। एक ओर तो शिक्षा व अन्य क्षेत्रों में महिलाओं का प्रतिशत बढ़ा है, आत्मनिर्भर हो रही है, विकास की प्रकिया से भी जुड़ रही हैं। लेकिन दूसरी ओर महिलाओं के साथ हिंसा, शोषण व अत्याचार की निरन्तर बढ़ती जा रही घटनाएँ और लगातार घटता जा रहा बाललिंगानुपात अत्यन्त चिन्ता का विषय है। हमारा संविधान समता और स्वतन्त्रता पर आधारित है, जो स्त्री-पुरूष को बिना किसी भेदभाव के समानता का अधिकार प्रदान करता है। इन वर्षो में संविधान के अलावा भी कई नये कानून, नियम व नीतियां महिलाओं के हक में बने, लेकिन महिलाओं से सम्बन्धित अधिकांश कानून सजावट की वस्तु मात्र बनकर रह गये हैं। देश की

सर्वोच्च विधायिका 'संसद' ने 2013 में भारतीय दण्ड संहिता (आई.पी.सी.), अपराध प्रक्रिया संहिता (सीआर.पी. सी.) तथा साक्ष्य अधिनियम (एविडेन्स एक्ट) आदि में कई क्रान्तिकारी संशोधन करते हुये नये ठोस प्रावधान किये हैं। बावजूद इन सब के महिलाओं के साथ भेदभाव, अत्याचार व हिंसा निरन्तर बढ़ती जा रही है। राष्ट्रीय अपराध रेकॉर्ड ब्यूरो (एन.सी.आर.बी.) के अनुसार भारत में प्रतिदिन 848 महिलाएं प्रताड़ना, दुष्कर्म या हत्या का शिकार होती है और इस प्रकार के मामले दिल्ली में सबसे ज्यादा होते हैं। महिला हिंसा के मामले में राजस्थान भी पीछे नहीं है। राजस्थान पुलिस के अपराध अनुसंधान विभाग (अपराध शाखा) द्वारा प्रकाशित मासिक अपराध रिपोर्ट के अनुसार राजस्थान में महिला अत्याचार संबंधी मामलों (दहेज मृत्यु, दहेज आत्महत्या का दुष्प्रेरण, महिला उत्पीड़न (498-क), बलात्कार, छेड़छाड़, व्यपहरण/अपहरण व अन्य) की स्थिति वर्ष (जनवरी से दिसम्बर) 2011 में 20765, 2012 में 21975, 2013 में 29150 तो वर्ष 2014 में लगभग 31000 शिकायतें पुलिस में दर्ज हुई हैं। राजस्थान राज्य महिला आयोग के वार्षिक प्रतिवेदन के आधार पर राजस्थान राज्य महिला आयोग की स्थापना (मई 1999) से लेकर नवम्बर 2011 तक लगभग 13 वर्षो में 16 विभिन्न श्रेणियों में कुल 15866 शिकायते दर्ज हुई हैं, वहीं दिसम्बर 2011 से नवम्बर 2014 तक तीन साल के कार्यकाल में 11026 शिकयतें दर्ज हुई हैं। राज्य महिला आयोग में उपलब्ध आकड़ों के आधार पर महिला आयोग में वर्ष (जनवरी से दिसम्बर) 2012 में 2658, 2013 में 3833 तथा 2014 में लगभग 4000 शिकायतें दर्ज हुई हैं। राजस्थान पुलिस द्वारा प्रकाशित मासिक अपराध प्रतिवेदन तथा राज्य महिला आयोग द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रतिवेदन में दर्शाये गये आकड़ों का तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि महिलाओं के विरुद्ध सभी तरह के अपराध निरन्तर तेजी से बढ़ रहे हैं। ऐसा लगता है जैसे कानून का कोई डर समाज में नहीं है।

कानूनों का कियान्वयन करवाने तथा आपराधिक न्यायिक व्यवस्था में पुलिस की महत्त्वपूर्ण भूमिका होनी चाहिए। पुलिस जनता व कानून की सहायता के लिए होती है। कानून तोड़ने व अपराधी प्रवृत्ति के लोगों को पुलिस व कानून का डर लगना चाहिए परन्तु ऐसा बहुत कम हो पाता है अपराधियों को राजदण्ड का भय नहीं रहा। सबसे अधिक दुःख की बात तो यह है कि पुलिस के संरक्षण व अभिरक्षण (पुलिस कस्टडी) में महिलाओं के साथ छेड़छाड़, यौन उत्पीड़न व बलात्कार की घटनायें तथा महिलाओं की हत्या हो जाना ये सोचने के लिए मजबूर करता है कि रक्षक ही भक्षक बन जाए और बाड़ ही खेत को चरने लगे तो फिर कैसा न्याय ? कैसी सुरक्षा ? प्रत्येक पुलिस थाने पर लिखा होता है - अपराधियों में भय और आमजन में विश्वास लेकिन हो उल्टा रहा है, आमजन में भय और अपराधियों में विश्वास बढ़ता जा रहा हैं क्योंकि ले देकर पुलिस मामले को रफा-दफा करने व जुगाड़ बैठाने में लगी रहती है। पुलिस प्रशासन की पूर्वाग्रह युक्त भूमिका का होना, पुलिस की अपराधियों के साथ सांठ-गांठ होना, पुलिस का स्वयं अपराधों में भागीदार व सहयोगी की भूमिका में आ जाना आदि के चलते घृणित अपराध भी पुलिस रोक नहीं पाती है। महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा - महिला उत्पीड़न, दहेज प्रताड़ना, हत्या और दहेज हत्या, छेड़छाड़, अपहरण, बलात्कार, नाबालिग लड़कियों व छोटी बच्चियों का अपहरण व उनके साथ गैंगरैप जैसी हृदय विदारक घटनायें, जिनमें पुलिस की लापरवाही तथा महिलाओं के साथ होने वाली घटनाओं को पुलिस द्वारा बहुत हल्के में ले लेना अथवा किसी सामाजिक, राजनीतिक दवाब तथा

स्वयं के आर्थिक लाभ के चलते पुलिस द्वारा अधिकांश मामलों में सीधे एफ.आई.आर. दर्ज नहीं कर महिला को बार-बार थाने के चक्कर कटवाने, पुलिस थाने में महिला के साथ होने वाले दुर्व्यवहार के डर आदि का ही परिणाम है कि आज अधिकांश मामलों में महिलाएं सीधे पुलिस थाने पर जाने से कतराने लगी और उन्हें 156(3) के तहत अदालत में इस्तगासा दायर करना पड़ता है। अदालत के माध्यम से उनकी शिकायतें थाने पर दर्ज हो पा रही हैं। यदि पुलिस एफ.आई.आर. दर्ज करती भी है तो कमजोर धाराओं में, कभी सम्बन्धित धाराओं में दर्ज कर भी लेती है तो उसकी कार्यवाही बहुत समय तक लम्बित रखना, महिला की बात को धैर्य से नहीं सुनना, धारा 161 के तहत उसके बयान लिखते वक्त उसे गुमराह करना या जैसा वह बताती है वैसे बयान नहीं लिखना, अनुसंधान सही तरीके से नहीं करना, बिना ठोस अनुसंधान एवं कार्यवाही के महिलाओं से संबंधित ज्यादातर मामलों में एफ.आर. लगाने में पुलिस जितनी फुर्ती दिखाती है उतनी महिला को न्याय दिलाने की प्रक्रिया में नहीं। कई बार पुलिस द्वारा कार्यवाही में जान-बूझकर विलम्ब किये जाने के परिणाम स्वरूप अपराधियों की ओर से बचाव में पहले एफ.आई.आर. दर्ज हो जाती है और पीड़ित महिला की बाद में, जिसे काउन्टर एफ.आइ.आर. कहकर महत्वहीन बना दिया जाता है, तो कभी महिला द्वारा दर्ज करवायी गई एफ.आई.आर. के विरुद्ध तुरन्त बचाव पक्ष की ओर से काउन्टर एफ.आई. आर. दर्ज कर महिला के साथ ब्लैकमेल किये जाने के अवसर प्रदान किये जाते हैं। पीड़ित महिलाएं अपने प्रकरण में आगे की कार्यवाही की प्रगति जानने के लिए जब थाने जाती है तब उसे टके सा जवाब मिलता है - 'बहुत तलाश करली, हमें तो अपराधी मिल ही नहीं रहे हैं, तुम पकड़कर ले आओ तब हम गिरफ्तार कर लेंगे' तो कभी महिला को यह कहा जाता है कि 'तुम्हारे मामले में 'हमने तो एफ.आर. लगा दी, तुम्हे जो करना है कर लो या कोर्ट में जाकर पुनः खुलवा लें'। थाने पर प्राथमिकी (एफ.आई.आर.) दर्ज करने, पीड़िता के बयान, उसका मेडीकल करवाने, अनुसंधान पूरा कर कोर्ट में आरोप पत्र (चार्जशीट) प्रस्तुत करने आदि प्रक्रिया में ही बहुत समय खर्च हो जाता है और कभी-कभी तो साल-दो साल भी लग जाते हैं। मामला चाहे वह भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498-क (महिला उत्पीड़न), 406 (स्त्रीधन), 304-बी भा.द.सं. (दहेज हत्या) अथवा 302 (हत्या), 307 (हत्या का प्रयास), 306 (आत्महत्या के लिए उकसाना या दुष्प्रेरित करना) तथा 354 (छेड़छाड़), 509 (लज्जाभंग), 363-366 व 373 (अपहरण करना या बलपूर्वक भगाकर ले जाना) या 376 (बलात्कार) का हो अथवा सामाजिक कुरीतियों के चलते महिला हिंसा का मामला जैसे - नाते व शादी के नाम पर लड़कियों की खरीद फरोक्त, (35 साल का दुल्हा 6 साल की दुल्हन) आंटा-सांटा, कुकड़ीप्रथा, दहेजप्रथा, बाल विवाह, डायन, घर की इज्जत व प्रतिष्ठा के नाम पर महिला की हत्या (ऑनर किलिंग), महिला को निर्वस्त्र कर, बाल काट कर पेड़ से बांधना या गधे पर बैठाकर गांव में घुमाना, चौराहे पर ले जाकर उसकी इज्ज्त को तार-तार करना, बच्चियों, युवतियों व महिलाओं पर तेजाब फेंकने के परिणामस्वरूप 40 से 60 प्रतिशत तक झुलस जाने जैसी रोंगटे खड़े करने आदि सभी प्रकरणों में पुलिस की भूमिका पर सवालिया निशान लगता है। राजस्थान के सीकर जिले के दिवराला गांव में 4 सितम्बर 1987 को पति के शव के साथ औरत (पत्नी) को जिंदा जलाना/ 'विधवा दहन' का सती के रूप में महिमा मण्डन जैसी घटना में भी पुलिस के पूर्वाग्रह के चलते उसकी निष्क्रियता उजागर हुई। 4 सितम्बर से 16 सितम्बर तक के पूरे घटना क्रम में पुलिस ने असहाय एवं

मूकदर्शक की भूमिका निभाई, अन्यथा इस घटना में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 व 306 में मुकदमा दर्ज करना चाहिए था। राजस्थान उच्च न्यायालय के 15 सितम्बर के स्थगन आदेश की भी पुलिस ने अनदेखी की जिसकी वजह से चुन्दड़ी समारोह का निर्धारित समय सुबह ग्यारह बजे से बदलकर सुबह 8 बजे कर दिया गया।

पुलिस की मानसिकता महिला को त्वरित न्याय दिलाने वाली होती ही नही है। पुलिस की लापरवाही व अपराधियों के साथ मिलीभगत होने से न्याय पाना महिलाओं के लिए सपने वाली बात हो जाती है। पुलिस में महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता की कमी के चलते महिला को न्याय मिलना मुश्किल हो जाता है। आपराधिक न्यायिक व्यवस्था में पुलिस की डायरी सबसे महत्वपूर्ण होती है। किसी भी प्रकरण में पुलिस द्वारा जिस रूप में पुलिस डायरी अदालत में पेश की जाती है उसी के आधार आगे की कार्यवाही निर्भर करती है। पुलिस द्वारा कई बार सम्बन्धित धाराओं में मुकदमा दर्ज नहीं करना या कमजोर धाराएं डालना या विरोधाभासी धाराएं डालना, महिला हत्या के मामलों में कभी-कभी पुलिस भा.द.सं. की धारा 302, 306 व 304ख के बीच अन्तर को स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाती हैं। अपहरण व बलात्कार के मामलों में आसानी से कह देना कि वह अपनी मर्जी से गयी अथवा उसकी सहमति से सबकुछ हुआ आदि दलिलों के साथ अदालत में चार्जशीट पेश करना ताकि अपराधी अदालत द्वारा 'संदेह का लाभ' प्राप्त कर छुट सके और महिला न्याय की तलाश में फिर भी भटकती रहे।

राजस्थान में सबसे अधिक घरेलू हिंसा के मामले सामने आ रहे हैं। 1984 के पहले घरेलू हिंसा को रोकने का अलग से कोई कानून नहीं था, मात्र 323 (आई.पी. सी.) के तहत मामूली मारपीट के प्रकरण ही दर्ज होते थे। 1984 में भारतीय दण्ड संहिता में एक नई धारा 498(क) (महिला उत्पीड़न) जोड़ी गयी तथा इस धारा को संज्ञेय (कान्गानीजेबल), अशमनीय (नॉन-काम्पाउण्डेबल) एवं अजमानतीय /गैर जमानतीय (नॉन-बेलेबल) बनाया गया। इस कानून का सामाजिक और वैधानिक पक्ष यह था कि इसे महिलाओं पर अत्याचार के खिलाफ लाया गया था। इस कानून के बाद से यह उम्मीद बंधी कि इस सख्त कानून से विवाहित महिला के साथ घर की चारदीवारी में होने वाले महिला उत्पीड़न पर नियत्रंण लग सकेगा, परन्तु ऐसा नहीं हुआ। प्रारम्भ में पुलिस थाना स्तर पर ही इस धारा को महज दहेज के साथ जोड़कर देखा जाने लगा और भ्रान्तियां फैलाई गयी कि महिलाएं इसका दुरूपयोग करती हैं। जबकि यह दहेज का कानून नहीं होकर बिना दहेज के अन्य कारणों से भी महिला के साथ हो रहे उत्पीड़न के विरुद्ध कार्यवाही करने का कानून है। महिला उत्पीड़न के अन्य कारणों को समझे बिना मात्र दहेज के साथ जोड़कर देखने से महिलाओं का बहुत नुकसान हुआ है। उपलब्ध आकड़ों से स्पष्ट होता है कि प्रारम्भ में जब 498-क के तहत प्रकरण दर्ज नहीं होते थे तब हत्या / दहेज हत्या की घटनाएँ ज्यादा होती थीं। देखा जाये तो भा.द.सं. की धारा 498-क एक नियन्त्रणकारी तत्व हैं जिसमें प्राथमिक स्तर पर सख्त कार्यवाही जब भी हुई महिला हत्या/दहेज हत्या/दहेज मृत्यु (304ख) के मामलों में कमी आयी। महिलाओं के लिए यह कानून वरदान से कम नहीं है, क्योंकि दहेज की होने वाली हत्याओं के कटु सत्य को नकारा नहीं जा सकता है। यदि महिलाओं के प्रति पुलिस संवेदनशीलता का परिचय देती, इस धारा का उचित इस्तेमाल करने में मदद करती तो कभी भी इस कानून को बदनाम करने की पृष्ठभूमि अथवा वातावरण तैयार नहीं होता। 498-ए के मामलों में पुलिस थाने पर रिपोर्ट दर्ज होने के बाद यह धारा असंज्ञेय होने के बावजूद पुलिस द्वारा दोनों पक्षों को थाने पर बुलाकर,

घर टूटने से रोकने के बहाने दवाब बनाकर समझौते करवाना और बाद में उस प्रकरण में पुलिस द्वारा वाकिया घटा ही नहीं एफ.आर. लगा देने की परम्परा ने ही महिला को झूठा करार दिया। दहेज की मांग थी या नहीं यह अनुसंधान का विषय हो सकता है लेकिन अन्य कारणों से महिला के साथ उत्पीड़न हो रहा है तब भी 498-क में चालान पेश होना चाहिए। घरेलू हिंसा की शिकार महिला को संरक्षण दिलवाना पुलिस का काम होना चाहिए। उदाहरण के तौर पर 498-क के तहत दर्ज कुछ प्रकरणों का जब अध्ययन किया गया तो पाया कि इस धारा के अशमनीय होने के बावजूद पुलिस द्वारा जिनमें समझौते करवाये गये उनमें आधे से ज्यादा महिलाएँ पीहर (मायके) में बैठी हैं, उनका घर नहीं बसा परन्तु पति जेल जाने से जरूर बच गया। जिन मामलों में पुलिस द्वारा समझौता करवाकर हिंसा वाले घर (ससुराल) में भिजवाया गया है, उनमें से कई महिलाओं को पुनः हिंसा का सामना करना पड़ा, यहां तक कि उनकी हत्या कर दी गई। इस तरह समझौता करवाकर महिला को पुनः हिंसा वाले घर में जाने को मजबूर करना, संविधान व कानूनों का खुला उल्लंघन है और यह उल्लंघन सबसे पहले पुलिस स्वयं करती है।

भारतीय दंड संहिता की धारा 498 क में दर्ज लगभग सभी एफ.आई.आर में 406 'स्त्रीधन' की धारा देखने को मिलती है। स्त्रीधन में न केवल दहेज की सामग्री, वस्तुएं, पैसा अपितु महिला द्वारा स्व-अर्जित सम्पति, मित्रों व रिश्तेदारों द्वारा दिये गये उपहार आदि भी सम्मिलित होते हैं। इस धारा के अन्तर्गत दर्ज मामलों में भी पुलिस शिकायतकर्ता को स्त्रीधन दिलाने के नाम पर टूटा-फूटा फर्नीचर, सड़ा-गला सामान या कुछ अन्य वस्तुएं थाने पर ले आती हैं। अधिकांश थानों पर स्त्रीधन का सामान पड़ा / बिखरा हुआ मिलता है। अपराधी को जमानत दिलाने का रास्ता बनाने के लिए पीड़िता से आधे-अधूरे स्त्रीधन की प्राप्ति रसीद लेकर पुलिस उसे अदालत में पेश कर देती हैं और यह दर्शाती है कि स्त्रीधन की वसूली बकाया नहीं है और दोषी व्यक्तियों को जमानत मिल जाती है। अधिकांश थानों पर महिलाएं थाने से अपना सामान इसलिए नहीं उठाती है चूंकि मूल्यवान वस्तुएं व जेवर तो पुलिस दिला नहीं पाती है। एक बार जमानत पर छूट जाने के बाद अदालतों में तारीख पर तारीख पड़ती रहती है। कोर्ट के चक्कर लगाते-लगाते पीड़िता की आधी जिन्दगी बर्बाद हो चुकी होती है, बच्चे बिलख रहे होते हैं, खाने के लाले पड़ जाते हैं लेकिन पुलिस पीड़ित महिलाओं को न्याय दिलाने में सहयोग करने के बजाय अपराधियों को बचाने में सहयोगी बन जाती है। आये दिन महिलाओं के गले की चैन खींची जाती हैं, लेकिन चैन खींचकर ले जाने वाला पुलिस की पकड़ से तुरन्त बाहर हो जाता है। पुलिस की मिलीभगत हो या नहीं फिर भी एक सवाल तो तब भी उठता है आखिर पुलिस के होते हुए आये दिन हो रही ऐसी घटनाओं पर अंकुश क्यों नहीं लग पा रहा है?

बच्चियों व महिलाओं के साथ आये दिन होने वाले अपहरण, बलात्कार अथवा सामूहिक बलात्कार (गैंग रेप) की घटनाओं में पुलिस द्वारा तुरन्त एफ.आई.आर. दर्ज नहीं करना या विलम्ब से करना, साक्ष्य एकत्रित नहीं करना या करके उन्हें सुरक्षित नहीं रखना, मेडिकल समय पर नहीं करवाना तथा धारा 164 के तहत मजिस्ट्रेट के समक्ष बयान न करवाना या करवाने में विलम्ब करना अथवा 164 के बयानों के लिए कोर्ट ले जाते वक्त रास्ते में पीड़िता पर दबाव बनाना कि वह अपने बयान बदल लें, क्योंकि सामने वाला व्यक्ति प्रभावशाली एवं शक्तिशाली है। एक ओर तो पुलिस शिकायतकर्ता महिलाओं को धारा 161 के तहत दर्ज उनके बयानों की नकल देने से भी इंकार कर देती है और दूसरी ओर पुलिस ही धारा 161 के बयानों की प्रतिलिपि मीडिया को जारी

भी कर देती है। नाबालिग लड़कियों के मामलों में भी पुलिस द्वारा यह कहना कि पीड़िता अपनी मर्जी से गई या उसकी सहमति से सब कुछ हुआ, आरोपी व्यक्ति उसका करीबी रिश्तेदार है। बहुत ही शर्मनाक बात है कि ऐसे संवेदनशील मामलों में भी पुलिस का रवैया सहानुभूतिपूर्ण तथा न्यायपूर्ण नहीं रहता है। सितम्बर 1992, भटेरी, तहसील बस्सी, जिला जयपुर की सामूहिक बलात्कार की घटना से स्मरण हो आता है कि उस केस में भी पुलिस की लापरवाही व अनदेखी से केस इतना कमजोर बना दिया गया कि तब से लेकर आज तक पीड़िता को न्याय नहीं मिला। यह प्रकरण आज भी राजस्थान उच्च न्यायालय में लंबित है। हालांकि इस प्रकरण में महिला संगठनों द्वारा दायर एक याचिका में 1997 में सर्वोच्च न्यायालय ने एक ऐतिहासिक फैसला देते हुए महिलाओं के विरुद्ध कार्यस्थल पर यौन-शोषण की रोकथाम के लिए विशाखा गाइड लाइन जारी की तथा 2013 में संसद ने एक नया कानून महिलाओं का कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न (निवारण, प्रतिषेध एवं प्रतितोष) अधिनियम, 2013 पारित किया। पुलिस के ऐसे रवैये के चलते महिलाओं की सुरक्षा कैसे हो पायेगी यह एक विचारणीय विषय है। सार्वजनिक स्थानों, सड़कों तथा शैक्षणिक व अन्य संस्थानों में कैमरे लगवाकर महिलाओं की रक्षा करने का दावा तो किया जा सकता है लेकिन वास्तविकता में ऐसा नहीं हो पा रहा है। घटना के बाद कैमरे से अपराधी की पहचान कर उसे ढूंढने में भी पराक्रम चाहिये। यह पराक्रम मानवीय शक्ति व राजनीतिक इच्छा शक्ति के बिना संभव नहीं है। अपराध के विरूद्ध पराक्रम दिखाना ही सशक्त उपाय है। सवाल यह नहीं कि पुलिस में पराक्रम का अभाव है। यह बात दूसरी है कि पुलिस का पराक्रम कब, कहां, कैसे बिक जाता है या दबाया जाता है या उसका गलत इस्तेमाल किया जाता है। जो पुलिस महिला की सुरक्षा नहीं कर सकती वह समूचे समाज व राष्ट्र की सुरक्षा कैसे कर पायेगी।

यौन हिंसा व बलात्कार के कई ऐसे मामले जिनमें पुलिसकर्मियों द्वारा यौन उत्पीड़न किया गया जैसे जे.सी. बोस बलात्कार केस में पुलिस उपअधीक्षक तथा एक और मामले में डीआईजी मधुकर टंडन तो कई मामलों में थानाधिकारी व अन्य पुलिसकर्मी लिप्त पाये गये। कुछ मामलों में पुलिस के उत्पीड़न से अवसाद में आई महिलाओं ने ट्रेन के आगे कूदकर अपने को जान से खत्म करने की कोशिश की। सांगानेर सदर थाना जिला जयपुर व कपासन थाना जिला चित्तौड़गढ़ की घटनाएँ प्रमुख हैं।

पुलिस के अत्याचार की एक और कहानी गांव सिरमौली जिला अलवर की है। 4 जुलाई 2014 को रात करीब 9 से 9:30 बजे के बीच कोबरा पुलिस व कुछ गैर कोबरा पुलिस अधिकारियों/कर्मियों द्वारा सिरमौली के इस्माइल का बास में रह रहे इस्माइल के परिवार व पड़ौस की नमाज पढ़ती महिलाओं व बच्चों के साथ मारपीट करना, ज्यादती करना, आटा-चक्की तोड़ना, मटके फोड़ना, दरवाजे तोड़ना इत्यादि। इस घटना में छः साल की बच्ची, गर्भवती महिला व वृद्ध महिलाओं को भी चोटें आई। स्वप्रसंज्ञान लेते हुए महिला आयोग घटना की जांच करने सिरमौली पहुंचा तब महसूस किया कि बच्चों व महिलाओं पर पुलिस का आतंक है, पुलिस की गाड़ी को दूर से देखने पर भी बच्चे रोने लगते हैं व महिलाएं घबराकर भागने लगती हैं। इस तरह पुलिस कर्मियों द्वारा उनके साथ अमानवीय व्यवहार (अत्याचार) किया गया। इन बच्चों और महिलाओं का कसूर सिर्फ इतना ही था कि वे पुलिस द्वारा वांछित इस्माइल नाम के व्यक्ति का पता व जानकारी नहीं दे पाये। इस तरह कई मामले सामने आये जिनमें जांच अनुसंधान व बयान लेने के बहाने घरों में

घुसकर पुलिसकर्मियों ने महिलाओं के साथ न केवल मारपीट की बल्कि यौन-उत्पीड़न भी कारित किया है।

पुलिस थाने में महिला की हत्या/आत्महत्या :- यह घटना अक्टूबर 2014 सिरोही जिले के सरूपगंज थाने की है। मीडिया के माध्यम से एक समाचार देखने को मिलता है कि 6 अक्टूबर 2014 को सरूपगंज थाना (सिरोही) के महिला विश्राम गृह के बाथरूम के शॉवर पर लटककर एक लड़की ने फांसी लगा ली। राज्य महिला आयोग द्वारा इस घटना पर स्वप्रसंज्ञान लेते हुए घटनास्थल का दौरा किया गया तथा जानने की कोशिश की गयी कि उक्त महिला को कब से, किस अपराध/जुर्म में थाने पर रखा गया। तब बात खुलकर सामने आयी कि सिरोही के जोजरा गांव के पास शिवगढ़ में 30 सितंबर 2014 को एक अशोक नाम के व्यक्ति की हत्या हो गई और उक्त महिला का मृतक अशोक के साथ प्रेम संबंध था। इस हत्या में उस महिला के लिप्त होने की आशंका से इस महिला को 3 अक्टूबर 2014 को थाने पर बुलाया गया तब से उसे थाने पर ही रखा गया और 6 अक्टूबर 2014 को उक्त महिला की थाने में मौत को आत्महत्या का नाम दिया गया। महिला आयोग ने इस हत्या/आत्महत्या के लिए पूरे थाने को जिम्मेदार ठहराया। महिला आयोग के हस्तक्षेप के बाद इस प्रकरण में उस थाने पर तैनात थानाधिकारी (एस.एच.ओ.) व अन्य पुलिसकर्मियों के खिलाफ धारा 302/306 के तहत मुकदमा दर्ज हुआ। इस घटना ने पुलिस की कार्यप्रणाली की न केवल खामियां उजागर कीं अपितु कई सवाल खड़े किये- यदि उक्त महिला के मृतक अशोक के साथ प्रेम संबंध थे और दोनों की हत्या हो जाना क्या ऑनर किलिंग का मामला नहीं है ? बिना अपराध के, कोर्ट से पुलिस रिमांड का आदेश लिये बिना महिला को लंबे समय तक थाने पर रखना व मनचाहे तरीके से उससे हामी भरवाना आदि क्या पुलिस अत्याचार नहीं है? महिलाएं पुलिस थानों में ही सुरक्षित नहीं ऐसे में उन्हें सार्वजनिक स्थानों पर पुलिस क्या और कैसे सुरक्षा प्रदान करेगी? नियमानुसार महिलाओं को रात में थाने में नहीं बुलाया या रखा जा सकता है, दिन में भी पुलिस बिना महिला कांस्टेबल के महिलाओं को पकड़कर थाने नहीं ला सकती है। कानून के रखवाले या पालना करवाने वाले ही जब कानूनों की धज्जियां उड़ाने लगे तो आम जनता में कानून के प्रति भय तथा सम्मान कैसे हो सकता है?

महिला को निर्वस्त्र कर गांव में घुमाने की घटना एवं पुलिस की भूमिका :- यह घटना नवंबर 2014, जिला राजसमंद के चारभुजा क्षेत्र में थुरावड़ गांव के थाली का तालाब की है। थुरावड़ निवासी बरदी सिंह की 2 नवंबर को संदिग्ध परिस्थितियों में मौत होना, बिना किसी सूचना के उसका अंतिम संस्कार किया जाना तथा बाद में हत्या करवाने की आशंका से उसी गांव के कुछ लोग एक महिला के घर में घुसे और उसे बाल खींचकर चौक में लाए जहां उसे निर्वस्त्र कर, बाल काटकर, मुँह काला कर गधे पर बैठाया और पूरे गांव में घुमाया, बाद में उसे घायल अवस्था में छोड़कर चले गये। इस घटना ने मानवता को शर्मसार किया। शर्मनाक बात है कि 2 नवंबर से 9 नवंबर (आठ दिन) तक ग्रामीण उस महिला को प्रताड़ित करते रहे और पुलिस बेखबर रही। पुलिस तब भी मौके पर नहीं पहुंची जब महिला का सम्मान तार-तार करने की नीयत से 'पंचायत' का जमावड़ा शुरू होने लगा। सवाल यह है कि सुगबुगाहट जब 2 नवंबर से ही चल रही थी, तो पुलिस का खुफिया तंत्र क्या सो रहा था? संबंधित व्यक्ति की संदिग्ध मौत के बाद उसका चुपचाप अंतिम संस्कार कर दिया जाना, उसके बाद गांव वालों द्वारा मामले को हत्या बताना, आरोप एक महिला पर मढ़ना, फिर पंचायत बुलाकर फरमान सुनाना, गांव में

आठ दिन तक सिलसिलेवार चले इस घटनाक्रम की क्या पुलिस को तनिक भी भनक नहीं लगी ? यह सब दर्शाता है कि सिस्टम कितना नाकाम है। क्या पुलिस का जनता के साथ समन्वय और मुखबिरी नेटवर्क बिल्कुल फेल हो गया है? क्या यह पुलिस की कार्यप्रणाली पर बड़ा सवाल नहीं है? दरअसल जनता से पुलिस का संवाद ही नहीं है। सूचना तंत्र वहां कमजोर होता है जहां संवादहीनता होती है। जब पुलिस और प्रशासनिक तंत्र नाकाम होता है तो सरकार और समाज के दामन पर भी कालिख लगती है।

ऐसा नहीं है कि पुलिस में ईमानदार, निष्ठावान व संवेदनशील अधिकारी या कर्मचारी नहीं हैं लेकिन ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम है। समाज में व्याप्त लैंगिक भेदभाव वाली मानसिकता से पुलिस विभाग भी अछूता नहीं है। इस तरह की मानसिकता के चलते महिलाओं से संबंधित समस्याओं की अनदेखी करना या लापरवाही बरतना पुलिस के लिए आम बात है। प्रदेश की सरकार, गृह मंत्रालय/विभाग/सचिव व डी.जी. स्तर के अधिकारियों को चाहिए कि वे अधीन कार्यरत पुलिसकर्मियों के व्यवहार व गतिविधियों पर निगरानी रखें। समय-समय पर पुलिस के कार्यों का सामाजिक अंकेक्षण भी होना चाहिए। पुलिस जनता में अपना विश्वास स्थापित करने के लिए उसके साथ संवाद करे, बिना किसी दबाव के निःस्वार्थ व निष्पक्ष होकर समयबद्ध तरीके से अनुसंधान व अन्य कार्यवाही करें। समाज, प्रशासन व सत्ता में बैठे लोग भी संकल्प लें कि पुलिस का किसी तरह से भी गलत इस्तेमाल न करेंगे और न ही करने देंगे। यदि ऐसा होता है तो स्वस्थ एवं न्यायपूर्ण वातावरण विकसित हो पायेगा।
